Dalit discourse in the stories of the tenth decade: with special reference to the spirit of rebellion against caste-discrimination
(दशवें दशक की कहानियों में दलित विमर्श: जाति–भेद के प्रति विद्रोह की भावना के विशेष संदर्भ में)

जगदीशचन्द्र बैरागी*; डॉ. अरुणा दूबे ; डॉ. गीता नायक*****

***शोधार्थी, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन,म.प्र.;**सहायक–प्राध्यपक, हिन्दी, शा. कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन, म.प्र.; ****आचार्य एवं पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, म.प्र.; भारत**

अनुरूपी लेखक: jcb1480@gmail.com

DOI: 10.52984/ijomrc2104

सार:

प्राचीन काल से ही वर्ण व्यवस्था ने सामाजिक ताने बाने पर कुत्सित प्रहार किया है। आज के आधुनिक युग में जाति गत भेद भाव युवा मन में विद्रोह की भावना उत्पन्न की है। जिसका सजीव चित्रण हिन्दी दलित कहानीकार, डॉ. सुशीला टाकभौर, ओमप्रकाश वाल्मीकि जी की कहानियों में परिलक्षित होता है। प्रस्तुत शोध–पत्र में दशवें दशक की कहानियों में जातिगत भेद–भाव का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है, तथा दलित युवा शिक्षित सवर्ण युवाओं सम्मिलित आक्रोश की विवेचना कर इस निष्कर्ष को प्राप्त किया है कि जातिगत समरसता के लिये सामाजिक परिवर्तन हो रहा है परन्तु इसकी गति अभी सुस्त है, इसकी गति को तेज करने के लिये हिन्दी साहित्य के कलमकारो को और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है

संकेत: विद्रोह, जातिप्रथा, दलित, सवर्ण,

वैदिक काल से लेकर आज तक जातिप्रथा की व्यवस्था चलते आ रही है। आज विभिन्न क्षेत्रों में अर्थात साहित्यिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, तकनीकी, वित्तीय आदि क्षेत्र में बदलाव हो रहे हैं। लेकिन जाति व्यवस्था के अतंर्गत उतनी मात्रा में बदलाव नहीं आया है। आदमी किसी न किसी जाति में ही जन्म लेता है, जीवनयापन करता है और जाति के साथ ही मरता है। लेकिन मरने के बाद भी उनकी जाति नहीं मरती। इस संदर्भ में **डॉ. सुशीला टाकभौरे** जी का वक्तव्य सटीक लगता है– ***"हिंदू समाज व्यवस्था में जाति ऐसी चीज है जो इन्सान के जन्म के साथ ही जुड़ जाती है और वह इन्सान के मरने के बाद भी नहीं जाती है।"***[1] इस वक्तव्य से यह पता चलता है सूरज जब तक रहेगा तब तक यह जाति व्यवस्था स्थिर रहेगी। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से लोगों को इस व्यवस्था के कारण से कष्ट उठाना पड़ रहा है। जातिभेद के कारण ही हमारे समाज में आपसी द्वंद चलता ही रहता है, तथा सवर्णों से दलित लोगों को तरस खानी पड़ती है। खासकर हिंदी दलित साहित्य में इस प्रथा के कारण होने वाली

समस्याओं का चित्रण अधिक मात्रा में देखने को मिलता है। आधुनिक संदर्भ में, आदमी शिक्षा के कारण हर एक समस्या के प्रति विद्रोह की भावना अपनाता है। उसी प्रकार जाति प्रथा के प्रति भी इनकी विद्रोह की भावना तेज हो गयी है।

जानी मानी दलित कहानीकार **डॉ. सुशीला टाकभौरे** जी के **संघर्ष** कहानी में **शंकर** नामक लड़के को दलित होने के कारण बहुत संघर्ष करना पड़ता है। गाँव के कुछ लोग उनको अछूत मानते हैं। वह उसे अच्छा नहीं लगता। उनके मित्रगण उसके घर के अंदर नहीं आते और उन मित्रों के घर से उसे भगाते हैं। इस अपमान के बदले में वह जानबुझकर उन लोगों के घर के अंदर प्रवेश करता है। हुआ–छूत मानने वाले लड़कों से बदला लेना चाहता है। राह में चलते समय शंकर अपने सवर्ण मित्रों को अपनी टांग अड़ाकर गिराकर मन ही मन खुश हो जाता है।

इसी प्रकार **डॉ. दयानंद बटोही** जी के **भूल** कहानी में भी जातिप्रथा के प्रति विद्रोह की भावना उभरकर आयी है। जैसे कि इस कहानी के नायक **रमेश** और नायिका **पार्वती** अपने प्यार के संदर्भ में आड़े आनेवाले जातिप्रथा के संदर्भ में अपनी चिंता व्यक्त करते हुए **रमेश** कहता है कि– ***''पारो वह दिन कब आयेगा जब समाज में जाति भावना का नाश हो मानवता पराकाष्ठा पर होगी, काश हम दोनों के लिए जाति न होती।''***[ii]

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के कहानी **सपना** में भी जाति प्रथा की विरोध भावना उभरकर आयी है। सवर्ण लोग **गौतम** नामक दलित आदमी से पूरे मंदिर का निर्माण कार्य कर लेते हैं। जब मंदिर में बालाजी की प्रतिमा की प्राण प्रतिष्ठा कार्यक्रम में जब गौतम अपने परिवार के साथ आकर आगे की पंगत में बैठता है तो सवर्ण उसका विरोध करते हैं। गौतम इनके क्रूरता से क्रोधित होकर पंडाल गिराकर जाति प्रथा के प्रति विद्रोह व्यक्त करता है।

वाल्मीकिजी के **प्रमोशन** कहानी में **दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन** पहले स्वीपर बनके काम करता था। बाद में प्रमोशन होकर **मजदूर** बन जाता है तो सवर्ण लोग मानने को तैयार नहीं होते। इनको सभी स्वीपर के रूप में ही देखते हैं। इस व्यवहार से दिनेशपाल जाटव क्रोधित होकर इस प्रकार बताता है ***''स्वीपर था. अब नहीं हूँ... अब मैं मजदूर हूँ... कामगार मजदूर मजदूर भाई–भाई इंकलाब जिन्दावाद***।''[iii]

रिहाई कहानी में छोटे **छुटकू** के माँ–बाप को गोदाम के मालिक लाला गोदाम के अदंर काम करने के लिए गुलाम के रूप में रख लेता है। जब इन दोनों का देहांत हो जाता है तो इनका बेटा छुटकू इसका बदला लेना चाहता है। वह एक दिन गोदाम के मालिक के कार का पीछा करते गोदाम तक पहुंचता है। गोदाम में प्रवेश करके पूरे गोदाम को आग लगा देता है।

कूड़ाघर कहानी में **अजबसिंह** को एस.सी होने के नाते मकान मालिक घर से निकाल देता है– ***''मकान खाली कर दो.... तुम लोगों ने मकान किराए पर लेते समय यह नहीं बताया था कि तुम एस सी हो।''***[iv] शिक्षित सवर्णों के इस कथन से **अजबसिंह** का खून उबल आया था। उसने कहा **''बताया नहीं मतलब.... उस समय तो बहुत प्रगतिशील बन रहे थे...अरे तुमने पूछा होता तो हम बताते...यह तो कोई बात नहीं हुई।''**[v] आगे पत्नी से कहता है– **''इनसे जितना डरकर बात**

करेंगे ये हमें दबाने की कोशिश करेंगे। तुम इनकी फितरत नहीं जानती। जात–पाँत के सवाल पर ये सब इकट्ठे हो जाएँगे, चाहे आपस में जितना एक–दूसरे के खिलाफ लड़े।''[vi] अजबसिंह के शब्दों में पूरे सवर्ण जाति के प्रति विद्रोही भावना स्पष्ट होता है।

शवयात्रा कहानी में **सुरजा** के द्वारा पक्का मकान बनाना गाँव के प्रधान जी बलरामसिंह को अच्छा नहीं लगता। उनका कहना था कि ***''अटी में चार पैसे आ गए तो अपनी औकात भूल जाता है। बल्हारों को यहाँ इसीलिए नहीं बसाया था कि हमारी छाती पर हवेली खड़ी करेंगे... वह जमीन जिस पर तुम रहते हो, हमारे बाप–दादाओं की है। जिस हाल में हो... रहते हो...किसी को एतराज नहीं होगा। सिर उठा के खड़ा होने की कोशिश करोगे तो गाँव से बाहर कर देंगे।''***[vii] बलराम सिंह का एक–एक शब्द तीर की तरह सुरजा पर लगा था। सवर्णों की इस अमानुषीय व्यवहार पर सुरजा को गुस्सा आया। उसने अपने बेटे से कहा– ***''तू सच कहता था कल्लू... यो गाँव रहणे लायक ना है। आगे उसमें आत्मविश्वास जागा, ना बेटे, मकान तो ईब बणके रहवेगा...जान दे दूँगा, पर यो गाँव छोड़के न जाऊँगा।''***[viii] दलित तो उसकी वेदना, पीड़ा और उसके साथ किये गये अमानुषीय बर्बर व्यवहार के प्रति सदियों से संवेदनशील रहा। लेकिन अब उसमें इसके विरुद्ध लड़ने की शक्ति आ गई है।

प्रमोशन कहानी में जब **सुरेश** के मजदूर होने पर भी पत्नी को डर लगता है। उसके शब्दों से यह स्पष्ट है– ***''अजी, तुम भी किस चक्कर में पड़ गए हो अपनी ड्यूटी करो, घर वापस आ जाओ...कुछ ऊँच–नीच हो गया तो क्या करेंगे.... ।''***[ix] सुरेश में गहरा आत्मविश्वास था। उसने शांति को डॉट दिया– ***''तू हमेशा रहेगी। डरपोक ही...मजदूर बने हैं तो मजदूरों का दर्द भी तो जानना पड़ेगा. .. कल तक मैं एक स्वीपर था...जिसके दर्द का किसी को ख्याल भी नहीं था...न वे अपने दर्द को ठीक से जानते हैं... इसीलिए वे अपना कोई संगठन भी ना बना सके हैं... ।''***[x] सुरेश तो दलितों का दुःख–दर्द समझता है और मजदूरों के साथ यूनियन में शामिल होकर अपने अधिकारों के लिए लड़ना चाहता है। ग्रामीण अथवा कसबाई अशिक्षित दलितों के जीवन की अपेक्षा शिक्षित दलितों के प्रति सवर्णों का प्रत्यक्ष हुआ–छूत या शारीरिक शोषण कम हैं। अप्रत्यक्ष रूप से उनका शोषण किया जाता है।

दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन में **दिनेशपाल** को दलित होने के कारण अखबार के कार्यालय से अपमानित होकर निकलना पड़ा। ***''अब पत्रिकाओं में भी आरक्षण माँगनेवाले आने लगे...अब भंगी–चमार भी संपादक बनेंगे...***।''[xi] एक–एक शब्द सुनकर उसके मन में विद्रोह भावना लावे की तरह फूटने लगा। लेकिन वह कुछ नहीं कह पाया। उसका विद्रोह आँखों से फूट पड़ा।

ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित **बैल की खाल** कहानी में आर्थिक पिता का चित्रण मिलता है। **काले** और **भूरे** गरीब दलित थे। शराब के कारण वे मृत बैलों की खाल निकालकर बेचना, उसी पैसे से जीविका चलाना उनका दैनिक कार्य था। एक दिन अचानक पंडित बिरिजू मोहन का बैल रास्ते में मर जाता है। मृत बैल को निकाल ने के लिए इन दोनों को बुला भेजने पर भी नहीं मिलते हैं तो पंडित को गुस्सा आ जाता है। जब पता चलते ही काले और भूरे दोनों रस्सी लिए आते हैं तो पंडित उन

दोनों को डाँटते हुए ***''कहाँ गए थे भोसड़ी के... तड़के से ढूंढ–ढूंड के गोडे टूट गए हैं। अब आ रहे हो महाराज की तरियो... इस बैल को कौन उठायेगा तुम्हारा बाप... ।''***[xii] गालियों पड़ने पर भी दोनों बिना कुछ कहे अपने काम में व्यस्त हो जाते हैं। बैल को वहाँ से हटाते हैं।

कंवल अपने दोस्त की शादी को उलझन से बचाने के लिए वहाँ से चला जाता है। ***''क्षण भर को कंवल पंडित के पास रुका। उसने कंधे पर लटके बैग को एक बार फिर उसने कसकर पकड़ लिया था। पंडित को दौड़ाने का विचार उसकी चेतना में उभरा एयबैंक पंडित की खोपड़ी पर मरने के लिए बैग कंधे से उतारा अरविंद की छलछलाई आँख सामने आ गई। हाथ वहाँ रूक गए थे।''***[xiii] शिक्षित वर्ग भेदभाव को भुलाना चाहता है। इसका उदाहरण है अरविंद, कंवल और विष्णुदत्त नैथानी। लेकिन परंपरागत विचारों को पकड़कर रहनेवाले पंडितजी जैसे ब्राह्मण भेदभाव को भूलने नहीं देते। प्रत्येक क्षेत्र में प्रगतिशील विचारधारा से आगे बढनेवाला भारतीय सिर्फ जातिगत रूढियों में बदलाव नहीं ला पाया। जाति व्यवस्था के दासत्व से मुक्ति के लिए दलितों को संगठित होकर लड़ना होगा।

वह अब पहले की दलित नारी नहीं रही। उसमें भी विद्रोह की शक्ति आ गयी है। वह हार को जीत में बदलना चाहती है। **बिरमा** ने सभी को संबोधित करते हुए कहा– ***''इस हार पर मुँह क्यों लटका रहे हो यह अतं न है... तुम लोगों ने मेरे विश्वास को जगाया है...इसे मरने मत देणा।''***[xiv] वह आगे संघर्षरत रहना चाहती है। सभी को अपने शब्दों से जागृत करती है। युवा पीढ़ी में संघर्ष के लिए चेतना जागृत कर बिरमा न्याय का रास्ता बनाती है। दलित ही नहीं सवर्ण भी, जाति व्यवस्था के बंधनों को तोड़ सकता है। **ब्रम्हास्त्र** अपने पिता और पंडित द्वारा मित्र अपमानित करने पर **अरविंद** कहता है, ***''मेरा सबसे अच्छा दोस्त है.. हमारे बीच जात–पाँत कभी नहीं आयी। उसे इस घर बुलाकर बेइज्जत नहीं कर सकता।''***[xv] जाति भेद–भाव को मिटाना अतः कहा सकता कि वर्ण व्यवस्था की दीवार अब के कगार है।

रिहाई कहानी में ***''छोटा छुटकू अपने माँ–बाप मरने उस पर कोई असर नहीं यह कोठरी की ओर दौड़ा। कोठरी के आले एक माचिस रखी थी। उसी पर उसकी नजर पड़ी उसने लपककर माचिस उठाई। दौड़ते हुए गोदाम घुसा। की तीली जलाकर बोरे लगा दी। देखते ही देखते बोरा सुलग उठा। बोरे को देख छुटकू को लगा जैसे उसने दुश्मन को पहचान लिया।''***[xvi] छुटकू जैसे छोटे बालक में भी जातीयता का रोष जगा है, वो भी इससे मुक्ति चाहता है। ***''अनजान और सड़क पर दौड़ते हुए छुटकू को लग रहा जैसे वह गोदाम की दिवारी से के लिए मुक्त हो गया है।''***[xvii] भारतीय समाज व्यवस्था में परिवर्तन आरंभ हो है। उच्चवर्ग भी इससे सहयोग प्रदान किया जो मनुष्यता उभरने संकेत **ब्राह्मण नहीं हूँ** कहानी में अमित से शादी करने रोकने पर सुनिता कहती है– ''**आप रहिए श्रेष्ठ.. ब्राह्मण.. मिरासी से ऊँचे। लेकिन मैंने कभी भी अपने को ब्राह्मण नहीं माना...यह सच्चाई मैंने शर्मा होने कभी ब्राह्मण की कोशिश की। मेरे लिए ब्राह्मण होना ही इसांन श्रेष्ठता का प्रतीक नहीं भ्रम जिसमें सभी ऊँच–नीच का खेल खेल आप जितना मातम मनाएँ.. मैं अमित से ही करूँगी। उसके पुरखों मिरासी मेरे लिए मायने नहीं रखता ड्गकहकर बाहर की ओर......।''**[xviii] यहाँ सुनीता नयी पीढ़ी

प्रतीक है। व्यवस्था बंधनों से मुक्ति के लिए वह कोशिश करती शब्दों जाति के हीन भावना पर आक्रोश है। बंधनों से मुक्ति का मार्ग नई पीढ़ी हाथ में है।

उपरोक्त कहानियों के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो गया है कि आज के आधुनिक युग में भी जाति प्रथा का दैत्य भारतीय समाज के ताने– बाने को ध्वस्त करने का कुत्सित प्रयास कर रहा है। जिसके कारण आम जनता में व्यापक रोष दिखाई देता है। अनुसूचित एवं सवर्ण वर्ग की यह खाई जहॉ एक ओर अनुसूचित वर्ग के अन्दर रोष एवं विद्रोह की भावना को जन्म दे रहा है। वही दूसरी ओर शिक्षित सवर्णो के मध्य भी छूआ–छूत, जाति गत अवधारणाओं की दीवार ध्वस्त होते हुए दिखाई दे रही है। वह दिन दूर नही जब समाज से जाति प्रथा के इस अभिशाप का शमन हो जायेगा। परन्तु अभी भी जन जागरण के इस प्रयास की आवश्यकता है और हीरा डोम , प्रेमचन्द से लेकर आज के आधुनिक युग सभी कलम के सिपाहियों के एक संकल्प को साथ ले कर चलना है कि सामाजिक चेतना तक हम नही रुकेगे......।

संदर्भ–

[i] डॉ. सुशीता टाकभौरे– **संघर्ष,** पृ. स. , 16।

[ii] **डॉ. दयानंद बटोही– सुरंग,पृ. सं., 52।**

[iii] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **प्रमोशन**, पृसं, 48।

[iv] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **कुडाघर**, पृ सं, 57।

[v] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **कुडाघर,** पृ सं, 57।

[vi] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **कुडाघर**, पृ सं. 58।

[vii] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **शवया**त्रा पृ सं. 39।

[viii] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **शवयात्रा** पृ सं, 39।

[ix] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **शवयात्रा**, पृ.सं, 46।

[x] ओमप्रकाश वाल्मीकि – **प्रमोशन**, पृ सं. 46।

[xi] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन**, पृ सं, 69।

[xii] ओमप्रकाश वाल्मीकि – **बैल और सलाम खाल**, पृ.सं. 33।

[xiii] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **ब्रम्हास्त्र** पृ सं 87।

[गपअ] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **यह अतं नहीं** पृ सं. 28।

[xv] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **ब्रम्हास्त्र**, पृ सं 86।

[xvi] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **मैं ब्राम्हण नहीं हूँ,** पृ सं, 66।

[xvii] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **रिहाई**, पृ सं, 79।

[xviii] ओमप्रकाश वाल्मीकि– **रिहाई**, पृ सं, 80।